: संस्कृत : कुछ रोचक तथ्य....www.futurestudyonline.com

संस्कृत के बारे में ये 20 तथ्य जान कर आपको भारतीय होने पर गर्व होगा।
आज हम आपको संस्कृत के बारे में कुछ ऐसे तथ्य बता रहे हैं,जो किसी भी भारतीय का सर गर्व से ऊंचा कर देंगे;;

.1. संस्कृत को सभी भाषाओं की जननी माना जाता है।

2. संस्कृत उत्तराखंड की आधिकारिक भाषा है।

3. अरब लोगो की दखलंदाजी से पहले संस्कृत भारत की राष्ट्रीय भाषा थी।

4. NASA के मुताबिक, संस्कृत धरती पर बोली जाने वाली सबसे स्पष्ट भाषा है।

5. संस्कृत में दुनिया की किसी भी भाषा से ज्यादा शब्द है।वर्तमान में संस्कृत के शब्दकोष में 102 अरब 78 करोड़ 50 लाख शब्द है।

6. संस्कृत किसी भी विषय के लिए एक अद्भुत खजाना है। जैसे हाथी के लिए ही संस्कृत में 100 से ज्यादा शब्द है।

7. NASA के पास संस्कृत में ताड़पत्रो पर लिखी 60,000 पांडुलिपियां है जिन पर नासा रिसर्च कर रहा है।

8. फ़ोबर्स मैगज़ीन ने जुलाई,1987 में संस्कृत को Computer Software के लिए सबसे बेहतर भाषा माना था।

9. किसी और भाषा के मुकाबले संस्कृत में सबसे कम शब्दो में वाक्य पूरा हो जाता है।

10. संस्कृत दुनिया की अकेली ऐसी भाषा है जिसे बोलने में जीभ की सभी मांसपेशियो का इस्तेमाल होता है।

11. अमेरिकन हिंदु युनिवर्सिटी के अनुसार संस्कृत में बात करने वाला मनुष्य बीपी, मधुमेह,कोलेस्ट्रॉल आदि रोग से मुक्त हो जाएगा।संस्कृत में बात करने से मानव शरीरका तंत्रिका तंत्र सदा सक्रिय रहता है जिससे कि व्यक्ति का शरीर सकारात्मक आवेश (PositiveCharges) के साथ सक्रिय हो जाता है।

12. संस्कृत स्पीच थेरेपी में भी मददगार है यह एकाग्रता को बढ़ाती है।

13. कर्नाटक के मुत्तुर गांव के लोग केवल संस्कृत में ही बात करते है।

14. सुधर्मा संस्कृत का पहला अखबार था, जो 1970 में शुरू हुआ था।

आज भी इसका ऑनलाइन संस्करण उपलब्ध है।

15. जर्मनी में बड़ी संख्या में संस्कृतभाषियो की मांग है। जर्मनी की 14 यूनिवर्सिटीज़ में संस्कृत पढ़ाई जाती है।

16. नासा के वैज्ञानिकों के अनुसार जब वो अंतरिक्ष ट्रैवलर्स को मैसेज भेजते थे
तोउनके वाक्य उलट हो जाते थे।इस वजह से मैसेज का अर्थ ही बदल जाता था।
उन्होंने कई भाषाओं का प्रयोग किया लेकिन हर बार यही समस्या आई।आखिर में उन्होंने संस्कृत में मैसेज भेजा क्योंकि संस्कृत के वाक्य उल्टे हो जाने पर भी अपना अर्थ नही बदलते हैं।
जैसे
अहम् विद्यालयं गच्छामि।
विद्यालयं गच्छामि अहम्।
गच्छामिअहम् विद्यालयं ।
उक्त तीनो के अर्थ में कोई अंतर नहीं है।

17. आपको जानकर हैरानी होगी कि Computer द्वारा गणित के सवालो को हल करने वाली विधि यानि Algorithms संस्कृत में बने है ना कि अंग्रेजी में।

18. नासा के वैज्ञानिको द्वारा बनाए जा रहे 6th और 7th जेनरेशन Super Computers संस्कृतभाषा पर आधारित होंगे जो 2034 तक बनकर तैयार हो जाएंगे।

19. संस्कृत सीखने से दिमाग तेज हो जाता है और याद करने की शक्ति बढ़ जाती है।
इसलिए London और Ireland के कई स्कूलो में संस्कृत को Compulsory Subject बना दिया है।

20. इस समय दुनिया के 17 से ज्यादा देशो की कम से कम एक University में तकनीकी शिक्षा के कोर्सेस में संस्कृत पढ़ाई जाती है।

1. चेत्युच्चतं एतदयुक्त नातपस्कस्यात्मज्ञानेऽधिगमः
कर्मशुद्धिर्वेत्येवं ह्याह।
तपसा प्राप्यते सत्यं सत्वात्संप्राप्यते मनः।
मनसा प्राप्यते त्वत्मा ह्यात्मापत्या निवर्तते।।

-मैत्रायण्युपनिषद् ४। ३

अर्थात् तपश्चर्या बिना आत्मा में ध्यान नही लगता। न कर्म शुद्धि ही होती है।
तप से सत्व प्राप्त होता है। सत्व (ज्ञान) से मन का निग्रह होता है।
मन स्थिर होने पर आत्मा की प्राप्ति होती है और बन्धन छूट जाते हैं।

2.अष्टिर्गात्राणि शुद्धयन्ति मन: सत्येन शुद्धयति।
विद्या तपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्धयति।
-मनु

अर्थात् शरीर जल से और मन सत्य से शुद्ध होता है। आत्मा विद्या एवं तप से शुद्ध होती हैं तथा बुद्धि ज्ञान से।

3.आदित्यो हवै वाह्यः प्राण उदयत्येष ह्येन चाक्षुषं प्राण।
मनु नृहणान्ः पृथिव्यां या देवता सैषा पुरुषस्यापान।
मवस्टभ्यान्तरा यदाकाशः स समानो वायु व्यनिः
तेजो हवै उदानः
-प्रश्नोपनिषद्

यह सूर्य ही बाह्य प्राण है। उदय होकर दृश्य जगत की हलचलों को क्रियाशील करता है।
इस विश्व रूपी शरीर को यह सूर्य का महाप्राण ही जीवन्त रखता है।
पाँच तत्वों में वह पाँच प्राण (प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान) बनकर संव्याप्त है।

4. यच्चित्तस्तेनैष प्राण मायाति प्राणस्तेजसा युक्तः
महात्मना यथा संकल्पित लोकंनयति। -प्रश्नोपनिषद् ३। १०

आत्मा का जैसा संकल्प होता है वैसा ही स्वरूप संकल्प इस प्राण का बन जाता है।
यह प्राण ही जीव के संकल्पानुसार उसे विभिन्न योनियाँ प्राप्त कराता है।

5. प्राणो ब्रह्मेति ह स्माह कोषीतकिस्तस्य ह वा
एतस्य प्राणस्य ब्रह्मणो मनो दूतं वाक्परिवेष्ट्री चक्षुर्गात्र
श्रोत्र संश्रावयितृ यो ह वा एतस्य प्राणस्य ब्राह्मणो मनो
दूतं वेद दतवान्भवति यश्चक्षु गोप्तृ गोप्तृमान्भवति यः
श्रोत्रं संश्रावयितृ संश्रावयितृमान्भवति यो वाचं परिवेष्ट्री
परिवेष्ट्रोमान्भवति।
-कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् २। १

यह प्राण ही ब्रह्म है। यह सम्राट है। वाणी उसकी रानी है। कान उसके द्वारपाल हैं।
नेत्र अंगरक्षक, मन दूत, इन्द्रियाँ दासी, देवताओं द्वारा यह उपहार उस प्राण ब्रह्म को भेंट किये गये हैं।

6.प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे।
यो भूतः सर्वस्येश्वरी यस्मिन् सर्वप्रतिष्ठितम्।।
-अथर्व० कां० ११

उस प्राण को मेरा नमस्कार है, जिसके अधीन यह सारा जगत् है, जो सबका ईश्वर है,
जिसमें यह सारा जगत् प्रतिष्ठित है।

7.पवनो बध्यते येन मनस्तेनैव बध्यते।
मनश्च बध्यते येन पवनस्तेन बध्यते ॥
हेतुद्वयं तु चित्तस्य वासना च समीरणः।
तयोर्विनष्ट एकस्मिंस्तौ द्वावपि विनश्यतः ॥
-हठयोग प्रदीपिका ४।२१
जिसने प्राण वायु को जीता उसने मन जीत लिया। जिसने मन जीता उसने प्राण जीत लिया।
चित्त की चंचलता के दो ही कारण हैं-एक वासना का दूसरा प्राण वायु का चञ्चल होना।
इनमें से एक के नष्ट हो जाने पर दोनों का नाश हो जाता है |

8.पापासक्तं हि बन्धाय पुण्यासक्तं हि मुक्तये।
मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:।।
-स्कन्द पुराण
पाप में आसक्त मन बन्धक का और पुण्य में संलग्न मन मोक्ष का कारण है।
वस्तुत: मन ही मनुष्य को बन्धन में डालता और मुक्त करता है।

9.गंगाद्वारश्च केदार सन्ति हत्मां तथैब च।
एवानि सर्वतीर्थानि कृत्वा पापै: प्रमुच्यते।।
-*व्यास स्मृति*
जिसने अपने मन को जीत लिया उसके लिये गंगा द्वार, केदारनाथ आदि
सभी तीर्थो का लाभ अपने पास ही मिल जाता है।

10.जो बड़ेन को लघु कहें, नहीं रहीम घटी जाहिं.
गिरधर मुरलीधर कहें, कछु दुःख मानत नाहिं.।

रहीम

अर्थ :

रहीम कहते हैं कि बड़े को छोटा कहने से बड़े का बड़प्पन नहीं घटता,
क्योंकि गिरिधर (कृष्ण) को मुरलीधर कहने से उनकी महिमा में कमी नहीं होती।

11.सर्वेषामुत्तम स्थांना सर्वा सांचिर संपदाम्।
स्वमनो निग्रहो भूमिर्भूमिः सस्यश्रियामिव।।

-योग वाशिष्ठ ५। ४३। ३५

सब उत्तम परिस्थितियाँ, सब्र श्रेष्ठ चिर संपदाएँ मन के निग्रह से, उसी प्रकार प्राप्त होती हैं-
जैसे अच्छी भूमि से सब अन्न प्राप्त होते हैं।

12.सर्वेभ्य: मित्रेभ्य: शिक्षकदिवसस्य शुभाशया:।

भारते यत्र-तत्र बहुषु स्थानेषु एतादृशा: जनाः सन्ति ये मौनरूपेण, प्रसिद्धिं विना,
अविरतरूपेण संस्कृतस्य पठन-पाठनादिकं, प्रचारकार्याणि च कुर्वन्ति।
वस्तुत: तादृशानां तपस्विनां कारणत: एव संस्कृतम् अद्यापि जीवति।
यथा सुतानां संवर्धने एव मातृत्वस्य सार्थकता अस्ति तथा
संस्कृतप्रचारकार्येण एव संस्कृतज्ञानाम् अस्तित्वस्य सार्थक्यम् अस्ति। संस्कृतप्रचार: एव जीवनम्।
मित्राणि ! अस्मिन् शिक्षकदिवसे वयमपि तादृशानां शिक्षकानां मार्गम् अनुसराम:,
ये जीवनं पूर्णं संस्कृताय अर्पितवन्त:।

संस्कृतं भारतम् ! समर्थं भारतम् !!
मन: प्रमादाद्वर्धन्ते दुःखानि गिरि कूटवत्।
तद्वशादेव नंश्यन्ति सूर्यस्याग्रे हिमयथा।।

-योग वाशिष्ठ ३।९९। ४३

मन के प्रमाद से ही दुःख पर्वत की चोटी के समान बढ़ते हैं।
और मन की विवेकशीलता से वे ऐसे नष्ट हो जाते हैं।
जैसे- सूर्य की धूप से बर्फ नष्ट होती है।

12.मन: सर्वमिदं राम तस्मिन्नन्तश्चिकित्सिते।
चिकित्सतो वै सकलो जगज्जालमयो भवेत्।।

-योग वशिष्ठ ४। ४। ६

हे राम, मन ही सब कुछ है। मन की चिकित्सा लेने पर संसार के सब रोगों की चिकित्सा हो जाती है।

हरिॐ,प्रणाम,जय सीताराम,सुप्रभातम्।

13.उद्वरेदात्मनात्मान नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैवह्मात्मनो रिपुरात्मनः।।
बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मनोजिताः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।।

-गीता

स्वयं ही अपना उद्धार करना चाहिए। अपने आपको गिरावे नहीं। मनुष्य स्वयं अपना शत्रु है। जिसने अपने आपको सँभाल लिया,वह स्वयं ही अपना मित्र है। और जिसने अपने आपको पतित किया वह स्वयं ही अपना शत्रु है।

14. निरीक्षेन्नश्चलदृशा सूक्ष्म लक्ष्यं समाहितः।
अश्रु-सम्पात् पर्यन्तं आचार्ये स्त्राटक स्मृतम्।।
- "हठयोग-प्रदीपिका"

अर्थात्-एकाग्रचित्त होकर निश्च्चल दृष्टि द्वारा सूक्ष्म लक्ष्य को तब तक देखता रहे, जब तक आँखों में से आँसू न आ जाये। इस साधना को आचार्यगण त्राटक कहते हैं।

15.संत्यज्य हृदर्गुहशानं देवमन्यं प्रयान्तिये।
ते रत्नमभिवाँछन्ति त्यक्त हस्तस्थ कौस्तुभा।।

-योगवाशिष्ठ

अर्थात- जो हृदय रूपी गुफा में निवास करने वाले भगवान को छोड़कर अन्यत्र ढूँढ़ता फिरता है। वह हाथ की कौस्तुभमणि छोड़कर काँच ढूँढ़ते फिरने वाले के समान है।

16.सूक्ष्मातिसूक्ष्म कलिकस्यमध्ये विश्वस्य स्रष्टा रमनेकरूपम्।
विश्वस्यैक परिवेष्टितारं ज्ञात्वाशिवं शान्ति मत्यन्तमेति
। --श्वेत.उपनिषद्

जो सूक्ष्म से भी अत्यन्त सूक्ष्म हृदय गुहा रूप गुह्य स्थान के भीतर स्थित सम्पूर्ण विश्व की रचना करने वाला, अनेक रूप धारण करने वाला तथा समस्त जगत को सब ओर से घेरे रखने वाला है,उस एक अद्वितीय करुणास्वरूप महेश्वर को जानकर मनुष्य सदा रहने वाली शान्ति को प्राप्त होता है।

17.त्यक्त्वां विषयभोगांश्च मनोनिश्चलतां गतम्।
आत्मशक्तिस्वरूपेण समाधिः परिकीर्त्तितः ॥

-दक्षस्मृति ७।२१

विषय-भोगों की चंचलता त्याग कर जिसने स्थिर मनः स्थिति प्राप्त करली, आत्म-बल प्राप्त कर

लिया, उसकी स्थिति ‘समाधि’ की ही है।

18.पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय,
ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।
कबीर

अर्थ :
बड़ी बड़ी पुस्तकें पढ़ कर संसार में कितने ही लोग मृत्यु के द्वार पहुँच गए, पर सभी विद्वान न हो सके. कबीर मानते हैं कि यदि कोई प्रेम या प्यार के केवल ढाई अक्षर ही अच्छी तरह पढ़ ले, अर्थात प्यार का वास्तविक रूप पहचान ले तो वही सच्चा ज्ञानी होगा।

19.
अलसस्य कुतो विद्या , अविद्यस्य कुतो धनम् |
अधनस्य कुतो मित्रम् , अमित्रस्य कुतः सुखम् ||

अर्थात् :
आलसी को विद्या कहाँ अनपढ़ / मूर्ख को धन कहाँ निर्धन को मित्र कहाँ और अमित्र को सुख कहाँ |

20
चन्दनं शीतलं लोके ,चन्दनादपि चन्द्रमाः |
चन्द्रचन्दनयोर्मध्ये शीतला साधुसंगतिः ||

अर्थात् :
संसार में चन्दन को शीतल माना जाता है लेकिन चन्द्रमा चन्दन से भी शीतल होता है | अच्छे मित्रों का साथ चन्द्र और
चन्दन दोनों की तुलना में अधिक शीतलता देने वाला होता है |

21.सहज सुहृद गुर स्वामि सिख जो न करइ सिर मानि |
सो पछिताइ अघाइ उर अवसि होइ हित हानि ||

अर्थ :
स्वाभाविक ही हित चाहने वाले गुरु और स्वामी की सीख को जो सिर चढ़ाकर नहीं मानता ,वह हृदय में खूब पछताता है और उसके हित की हानि अवश्य होती है |

22.दोस पराए देखि करि, चला हसन्त हसन्त,
अपने याद न आवई, जिनका आदि न अंत।
कबीर

अर्थ :

यह मनुष्य का स्वभाव है कि जब वह दूसरों के दोष देख कर हंसता है, तब उसे अपने दोष याद नहीं आते जिनका न आदि है न अंत।

23.संत ना छाडै संतई, जो कोटिक मिले असंत
चन्दन भुवंगा बैठिया, तऊ सीतलता न तजंत।
कबीरदास

अर्थ :
सज्जन को चाहे करोड़ों दुष्ट पुरुष मिलें फिर भी वह अपने भले स्वभाव को नहीं छोड़ता. चन्दन के पेड़ से सांप लिपटे रहते हैं, पर वह अपनी शीतलता नहीं छोड़ता।

24. दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान |
तुलसी दया न छांड़िए ,जब लग घट में प्राण ||

अर्थ :
गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि मनुष्य को दया कभी नहीं छोड़नी चाहिए क्योंकि दया ही धर्म का मूल है और इसके विपरीत अहंकार समस्त पापों की जड़ होता है|

25:- यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् |
एवं परुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति ||

अर्थात् :
जैसे एक पहिये से रथ नहीं चल सकता है उसी प्रकार बिना पुरुषार्थ के भाग्य सिद्ध नहीं हो सकता है |

26: बलवानप्यशक्तोऽसौ धनवानपि निर्धनः |
श्रुतवानपि मूर्खोऽसौ यो धर्मविमुखो जनः ||

अर्थात् :
जो व्यक्ति धर्म (कर्तव्य) से विमुख होता है वह (व्यक्ति) बलवान् हो कर भी असमर्थ , धनवान् हो कर भी निर्धन तथा
ज्ञानी हो कर भी मूर्ख होता है |

27: अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसाम् |
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् |

अर्थात् :

यह मेरा है ,यह उसका है ; ऐसी सोच संकुचित चित्त वोले व्यक्तियों की होती है;इसके विपरीत उदारचरित वाले लोगों के
लिए तो यह सम्पूर्ण धरती ही एक परिवार जैसी होती है |

28: सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु |
बिद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ||
तुलसीदास
अर्थ :
शूरवीर तो युद्ध में शूरवीरता का कार्य करते हैं ,कहकर अपने को नहीं जनाते |शत्रु को युद्ध में उपस्थित पा कर कायर ही अपने प्रताप की डींग मारा करते हैं |

29: आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः |
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कृत्वा यं नावसीदति ||

अर्थात् :
मनुष्यों के शरीर में रहने वाला आलस्य ही (उनका) सबसे बड़ा शत्रु होता है | परिश्रम जैसा दूसरा (हमारा)कोई अन्य
मित्र नहीं होता क्योंकि परिश्रम करने वाला कभी दुखी नहीं होता |
30: (अर्जुन उवाच)
चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् |
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ||

अर्थात् :
(अर्जुन ने श्री हरि से पूछा) हे कृष्ण ! यह मन चंचल और प्रमथन स्वभाव का तथा बलवान् और दृढ़ है ; उसका निग्रह
(वश में करना) मैं वायु के समान अति दुष्कर मानता हूँ |
31: (श्री भगवानुवाच)
असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् |
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ||

अर्थात् :
(श्री भगवान् बोले) हे महाबाहो ! निःसंदेह मन चंचल और कठिनता से वश में होने वाला है लेकिन हे कुंतीपुत्र ! उसे
अभ्यास और वैराग्य से वश में किया जा सकता है |
32: मुखिया मुखु सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक |
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित बिबेक ||

अर्थ :
तुलसीदास जी कहते हैं कि मुखिया मुख के समान होना चाहिए जो खाने-पीने को तो अकेला है, लेकिन विवेकपूर्वक सब अंगों का पालन-पोषण करता है |

33: जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिये ज्ञान,
मोल करो तरवार का, पड़ा रहन दो म्यान।

अर्थ :
सज्जन की जाति न पूछ कर उसके ज्ञान को समझना चाहिए. तलवार का मूल्य होता है न कि उसकी मयान का – उसे ढकने वाले खोल का।

34: श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुंडलेन ,
दानेन पाणिर्न तु कंकणेन ,
विभाति कायः करुणापराणां ,
परोपकारैर्न तु चन्दनेन ||

अर्थात् :
कानों की शोभा कुण्डलों से नहीं अपितु ज्ञान की बातें सुनने से होती है | हाथ दान करने से सुशोभित होते हैं न कि कंकणों
से | दयालु / सज्जन व्यक्तियों का शरीर चन्दन से नहीं बल्कि दूसरों का हित करने से शोभा पाता है |

35: विद्या मित्रं प्रवासेषु ,भार्या मित्रं गृहेषु च |
व्याधितस्यौषधं मित्रं , धर्मो मित्रं मृतस्य च ||

अर्थात् :
ज्ञान यात्रा में ,
पत्नी घर में,
औषधी रोगी का
तथा धर्म मृतक का (सबसे बड़ा) मित्र होता हैं ।

36: पुस्तकस्था तु या विद्या ,परहस्तगतं च धनम् |
कार्यकाले समुत्तपन्ने न सा विद्या न तद् धनम् ||

अर्थात् :
पुस्तक में रखी विद्या तथा दूसरे के हाथ में गया धन—ये दोनों ही ज़रूरत के समय हमारे किसी भी काम नहीं आया
करते |

37: सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् |
वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः ||

अर्थात् :
अचानक (आवेश में आकर बिना सोचे समझे) कोई कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि विवेकशून्यता सबसे बड़ी विपत्तियों
का घर होता है | (इसके विपरीत) जो व्यक्ति सोच –समझकर कार्य करता है ; गुणों से आकृष्ट होने वाली माँ लक्ष्मी स्वयं ही
उसका चुनाव कर लेती है |
38: उदये सविता रक्तो रक्त:श्चास्तमये तथा।
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता॥

अर्थात् :
उदय होते समय सूर्य लाल होता है और अस्त होते समय भी लाल होता है, सत्य है महापुरुष सुख और दुःख में समान रहते हैं॥

39: यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्व-बोधा- दुद् भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथेः | स्तोत्रैर्जगत् त्रितय-चित-हरैरुदारेः स्तोष्ये किलाहमपि
तं प्रथमं जिनेन्द्रनम् ||

अर्थात् :
सम्पूर्णश्रुतज्ञान से उत्पन्न हुई बुद्धि की कुशलता से इन्द्रों के द्वारा तीन लोक के मन को हरने वाले, गंभीर स्तोत्रों के द्वारा
जिनकी स्तुति की गई है उन आदिनाथ जिनेन्द्र की निश्चय ही मैं (मानतुंग) भी स्तुति करुँगा|

40
: वक्तुं गुणान्गुण-समुद्र शशाङ्क-कान्तान् कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्धया| कल्पान्त-काल-पवनोद्ध-नक्र-चक्रं को वातरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ||

अर्थात् :
हे गुणों के भंडार! आपके चन्द्रमा के समान सुन्दर गुणों को कहने लिये ब्रहस्पति के सद्रश भी कौन पुरुष समर्थ है? अर्थात्
कोई नहीं| अथवा प्रलयकाल की वायु के द्वारा प्रचण्ड है मगरमच्छों का समूह जिसमें ऐसे समुद्र को भुजाओं के द्वारा तैरने के लिए
कौन समर्थ है अर्थात् कोई नहीं|
41: त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् | आक्रान्त-लोकमति-

नीलमशेषमाशु सूर्याशु-भिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ||

अर्थात् :
आपकी स्तुति से, प्राणियों के, अनेक जन्मों में बाँधे गये पाप कर्म क्षण भर में नष्ट हो जाते हैं जैसे सम्पूर्ण लोक में व्याप्त
रात्री का अंधकार सूर्य की किरणों से क्षणभर में छिन्न भिन्न हो जाता है|

42 नात्यद् भुतं भुवन-भूषण भूत-नाथ! भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः| तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति||

अर्थात् :
हे जगत् के भूषण! हे प्राणियों के नाथ! सत्यगुणों के द्वारा आपकी स्तुति करने वाले पुरुष पृथ्वी पर यदि आपके समान हो
जाते हैं तो इसमें अधिक आश्चर्य नहीं है| क्योंकि उस स्वामी से क्या प्रयोजन, जो इस लोक में अपने अधीन पुरुष को सम्पत्ति के द्वारा अपने समान नहीं कर लेता |
43: आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त-दोषं त्वत्सङ्कतथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति| दूरे सहस्र किरणः कुरुते प्रभैव पध्माकरेषु जलजानि विकासभाज्जि||

अर्थात् :
सम्पूर्ण दोषों से रहित आपका स्तवन तो दूर, आपकी पवित्र कथा भी प्राणियों के पापों का नाश कर देती है| जैसे, सूर्य तो दूर,उसकी प्रभा ही सरोवर में कमलों को विकसित कर देती है|

43: तुलसी मीठे बचन ते सुख उपजत चहुँ ओर |
बसीकरन इक मंत्र है परिहरू बचन कठोर ।।

अर्थ :
तुलसीदासजी कहते हैं कि मीठे वचन सब ओर सुख फैलाते हैं |किसी को भी वश में करने का ये एक मन्त्र होते हैं इसलिए मानव को चाहिए कि कठोर वचन छोडकर मीठा बोलने का प्रयास करें |

44: नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु |
जो सिमरत भयो भाँग ते तुलसी तुलसीदास ||

अर्थ :
राम का नाम कल्पतरु (मनचाहा पदार्थ देनेवाला)और कल्याण का निवास (मुक्ति का घर)
है,जिसको स्मरण करने से भाँग सा (निकृष्ट) तुलसीदास भी तुलसी के समान पवित्र हो गया |

45: द्रष्ट् वा भवन्तमनिमेष-विलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः| पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धोः क्षारं जलं जल-निधे रसितुं कः इच्छेत् ||

अर्थात् :
हे अभिमेष दर्शनीय प्रभो! आपके दर्शन के पश्चात् मनुष्यों के नेत्र अन्यत्र सन्तोष को प्राप्त नहीं होते| चन्द्रकीर्ति के समान निर्मल क्षीरसमुद्र के जल को पीकर कौन पुरुष समुद्र के खारे पानी को पीना चाहेगा? अर्थात् कोई नहीं |
46: चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशागंगनाभि- र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम्| कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्|

अर्थात् :
यदि आपका मन देवागंनाओं के द्वारा किंचित् भी विक्रति को प्राप्त नहीं कराया जा सका, तो इस विषय में आश्चर्य ही क्या है?
पर्वतों को हिला देने वाली प्रलयकाल की पवन के द्वारा क्या कभी मेरु का शिखर हिल सका है? नहीं |
47: यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्व् निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललाम-भूत| तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि रुपमस्ति|

अर्थात् :
हे त्रिभुवन के एकमात्र आभुषण जिनेन्द्रदेव! जिन रागरहित सुन्दर परमाणुओं के द्वारा आपकी रचना हुई वे परमाणु पृथ्वी पर निश्चय से उतने ही थे क्योंकि आपके समान दूसरा रूप नहीं है |

48: वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि निःशेष-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानम्| बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाशकल्पम्|

अर्थात् :
हे प्रभो! सम्पूर्ण रुप से तीनों जगत् की उपमाओं का विजेता, देव मनुष्य तथा धरणेन्द्र के नेत्रों को हरने वाला कहां आपका मुख? और कलंक से मलिन, चन्द्रमा का वह मण्डल कहां? जो दिन में पलाश (ढाक) के पत्ते के समान फीका पड़ जाता |

49: उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख- माभाति रुपममलं भवतो नितान्तम्|
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितानं बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति |

अर्थात् :
ऊँचे अशोक वृक्ष के नीचे स्थित, उन्नत किरणों वाला, आपका उज्ज्वल रुप जो स्पष्ट रुप से शोभायमान किरणों से युक्त है,
अंधकार समूह के नाशक, मेघों के निकट स्थित सूर्य बिम्ब की तरह अत्यन्त शोभित होता है |

50: सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्| बिम्बं वियद् विलसदंशुलता-वितानं तुगोंदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मेः |

अर्थात् :
मणियों की किरण-ज्योति से सुशोभित सिंहासन पर, आपका सुवर्ण कि तरह उज्ज्वल शरीर, उदयाचल के उच्च शिखर पर आकाश में शोभित, किरण रुप लताओं के समूह वाले सूर्य मण्डल की तरह शोभायमान हो रहा है|

51: सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि |
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकति हानि ||
तुलसीदास
अर्थ :
जो मनुष्य अपने अहित का अनुमान करके शरण में आये हुए का त्याग कर देते हैं वे क्षुद्र और पापमय होते हैं |दरअसल ,उनका तो दर्शन भी उचित नहीं होता |

52: राम नाम मनिदीप धरु जीह देहरीं द्वार |
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जौं चाहसि उजिआर ||

अर्थ :
तुलसीदासजी कहते हैं कि हे मनुष्य ,यदि तुम भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला चाहते हो तो मुखरूपी द्वार की जीभरुपी देहलीज़ पर राम-नामरूपी मणिदीप को रखो |

53: धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय,
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आए फल होय।
कबीरदास जी

अर्थ :
मन में धीरज रखने से सब कुछ होता है. अगर कोई माली किसी पेड़ को सौ घड़े पानी से सींचने लगे तब भी फल तो ऋतु आने पर ही लगेगा !

54: दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, तो दुख काहे होय॥
रहीम
अर्थ :

दुख में सभी लोग याद करते हैं, सुख में कोई नहीं। यदि सुख में भी याद करते तो दुख होता ही नहीं।

55: जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ,
मैं बपुरा बूडन डरा, रहा किनारे बैठ।
कबीर दास जी
अर्थ :
जो प्रयत्न करते हैं, वे कुछ न कुछ वैसे ही पा ही लेते हैं जैसे कोई मेहनत करने वाला गोताखोर गहरे पानी में जाता है और कुछ ले कर आता है. लेकिन कुछ बेचारे लोग ऐसे भी होते हैं जो डूबने के भय से किनारे पर ही बैठे रह जाते हैं और कुछ नहीं पाते।

56: राम नाम मनिदीप धरु जीह देहरीं द्वार |
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जौं चाहसि उजिआर ||
तुलसीदास
अर्थ :
तुलसीदासजी कहते हैं कि हे मनुष्य ,यदि तुम भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला चाहते हो तो मुखरूपी द्वार की जीभरुपी देहलीज़ पर राम-नामरूपी मणिदीप को रखो |

57: सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु |
बिद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ||
तुलसीदास
अर्थ :
शूरवीर तो युद्ध में शूरवीरता का कार्य करते हैं ,कहकर अपने को नहीं जनाते |शत्रु को युद्ध में उपस्थित पा कर कायर ही अपने प्रताप की डींग मारा करते हैं |

58: मुखिया मुखु सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक |
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित बिबेक ||
तुलसीदास
अर्थ :
तुलसीदास जी कहते हैं कि मुखिया मुख के समान होना चाहिए जो खाने-पीने को तो अकेला है, लेकिन विवेकपूर्वक सब अंगों का पालन-पोषण करता है |

59: दोस पराए देखि करि, चला हसन्त हसन्त,
अपने याद न आवई, जिनका आदि न अंत।
कबीर दास
अर्थ :

यह मनुष्य का स्वभाव है कि जब वह दूसरों के दोष देख कर हंसता है, तब उसे अपने दोष याद नहीं आते जिनका न आदि है न अंत।

60: बोली एक अनमोल है, जो कोई बोलै जानि,
हिये तराजू तौलि के, तब मुख बाहर आनि।

अर्थ :
यदि कोई सही तरीके से बोलना जानता है तो उसे पता है कि वाणी एक अमूल्य रत्न है। इसलिए वह ह्रदय के तराजू में तोलकर ही उसे मुंह से बाहर आने देता है।

61: अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप,
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।

अर्थ :
न तो अधिक बोलना अच्छा है, न ही जरूरत से ज्यादा चुप रहना ही ठीक है. जैसे बहुत अधिक वर्षा भी अच्छी नहीं और बहुत अधिक धूप भी अच्छी नहीं है.

62: ॐ असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्मा अमृतं गमय।

O Lord! Lead me from the untruth to truth, darkness to light and death to immortality.

हे प्रभु! असत्य से सत्य, अन्धकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरता की ओर मेरी गति हो ।

63 *संस्कृत*
परोपकाराय फलन्ति वृक्षा:, परोपकाराय वहन्ति नद्य:।
परोपकाराय दुहन्ति गाव:, परोपकाराय मिदं शरीरम् ॥
इंग्लिश
Trees are flourishing for charity. River flows for charity. Cow give milk for charity. The significance of the body is in charity.
अर्थ हिंदी
वृक्ष परोपकार के लिए ही फलते हैं। नदी परोपकार के लिए ही बहती है। गाय परोपकार के लिए दूध देती है। इस शरीर की सार्थकता परोपकार में ही है।

64
अग्निशेषमृणशेषं शत्रुशेषं तथैव च |
पुन: पुन: प्रवर्धेत तस्माच्शेषं न कारयेत् ||

If a fire, a loan, or an enemy continues to exist even to a small extent, it will grow again and again; so do not let any one of it continue to exist even to a small extent.

यदि कोई आग, ऋण, या शत्रु अल्प मात्रा अथवा न्यूनतम सीमा तक भी अस्तित्व में बचा रहेगा तो बार बार बढ़ेगा ; अत: इन्हें थोड़ा सा भी बचा नही रहने देना चाहिए । इन तीनों को सम्पूर्ण रूप से समाप्त ही कर डालना चाहिए ।

65
न अन्नोदकसमं दानं न तिथि द्वादशीसमा।
न गायत्र्याः परो मन्त्रो न मातु: परदैवतम्॥

Giving food and water is the highest charity, twelfth moon day is the most auspicious date, 'Gayatri Mantra' is the best among the 'Mantras' and mother is the highest God.

अन्न और जल के समान दान नहीं है, द्वादशी से समान तिथि नहीं है, गायत्री से बड़ा मंत्र नहीं है और माता से बड़ा देवता नहीं है।

66: प्रेरकः सूचकश्वैव वाचको दर्शकस्तथा ।
शिक्षको बोधकश्चैव षडेते गुरवः स्मृताः ॥

The one who infuses courage, gives instructions, shows the path for emancipation, punishes, and the one who is engaged in preaching is equal to that of a GURU.

प्रेरणा देनेवाले, सूचन देनेवाले, (सच) बतानेवाले, (रास्ता) दिखानेवाले, शिक्षा देनेवाले, और बोध करानेवाले – ये सब गुरु समान है ।

67: न अन्नोदकसमं दानं न तिथि द्वादशीसमा।
न गायत्र्याः परो मन्त्रो न मातु: परदैवतम्॥

Giving food and water is the highest charity, twelfth moon day is the most auspicious date, 'Gayatri Mantra' is the best among the 'Mantras' and mother is the highest God.

अन्न और जल के समान दान नहीं है, द्वादशी से समान तिथि नहीं है, गायत्री से बड़ा मंत्र नहीं है और माता से बड़ा देवता नहीं है।

68: क्रोधो वैवस्वतो राजा तृष्णा वैतरणी नदी।
विद्या कामदुघा धेनु: सन्तोषो नन्दनं वनम्॥

Anger is like King of Death. Greed is like turbulent river of hell. Knowledge is all fulfilling cow and contentment is the heaven's paradise.

क्रोध यमराज के समान है और तृष्णा नरक की वैतरणी नदी के समान। विद्या सभी इच्छाओं को पूरी करने वाली कामधेनु है और संतोष स्वर्ग का नंदन वन है।

69: अतितृष्णा न कर्तव्या तृष्णां नैव परित्यजेत्।
शनै: शनैश्च भोक्तव्यं स्वयं वित्तमुपार्जितम् ॥

Extra desires should be avoided but desires should not be given up totally. One should use self earned money gently.

अधिक इच्छाएं नहीं करनी चाहिए पर इच्छाओं का सर्वथा त्याग भी नहीं करना चाहिए। अपने कमाये हुए धन का धीरे-धीरे उपभोग करना चाहिये॥

70: अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्॥

There are two main sayings of Sri Vyasa in eighteen 'Puranas' - Helping others is a virtue and hurting others is sin.

अट्ठारह पुराणों में श्रीव्यास के दो वचन (प्रमुख) हैं - परोपकार से पुण्य होता है और पर-पीड़ा से पाप।

71: यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् |
एवं परुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति ||

As a chariot (cart) can't move with one wheel, similarly, without hard work destiny doesn't bring fruit.

जैसे एक पहिये से रथ नहीं चल सकता है उसी प्रकार बिना पुरुषार्थ के भाग्य सिद्ध नहीं हो सकता है |

72
: गुरुरात्मवतां शास्ता शास्ता राजा दुरात्मनाम् ।
अथा प्रच्छन्नपापानां शास्ता वैवस्वतो यमः ॥

The prudent is punished by the Guru, The wicked is punished by the King and people engaged in committing sins secretly are punished by the lord of death Yama.

आत्मवान् लोगों का शासन गुरु करते हैं; दृष्टों का शासन राजा करता है; और गुप्तरुप से पापाचरण करनेवालों का शासन यम करता है (अर्थात् अनुशासन तो अनिवार्य हि है) ।

73: क: काल: कानि मित्राणि को देश: को व्ययागमौ |
कस्याहं का च मे शक्ति: इति चिन्त्यं मुहुर्मुहु: ||

"How is situation around me (i.e. is it favourable or not)? who are (my) friends? how is condition in the country? what are the things for and against me (or what do I have and what I don't have)? who am I? what are my strengths?" one should always worry about these questions. Subhashitkar is suggesting us that we must be always alert and consider all this prior to any action.

चाणक्य के अनुसार, मनुष्य को कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना चाहिए। हमारा समय कैसा चल रहा है, कौन हमारा मित्र और कौन हमारा शत्रु है, हमारा निवास-स्थान कैसा है, हमारी आय और व्यय कितना है, हमारी शक्ति कितनी है- ये सब बाते ही मनुष्य के चिंतन और मनन का केंद्रबिंदु होनी चाहिए। इन्हें ध्यान में रखकर आचरण करनेवाला मनुष्य जीवन में कभी असफलता का मुख नहीं देखता।

74:-
क्षमा बलमशक्तानाम् शक्तानाम् भूषणम् क्षमा।
क्षमा वशीकृते लोके क्षमयाः किम् न सिद्ध्यति॥

Forgiveness is the power of powerless. Forgiveness adorns the powerful. Forgiveness has controlled this entire world. What cannot be achieved by forgiveness!

क्षमा निर्बलों का बल है, क्षमा बलवानों का आभूषण है, क्षमा ने इस विश्व को वश में किया हुआ है, क्षमा से कौन सा कार्य सिद्ध नहीं हो सकता है।

75: गते शोको न कर्तव्यो भविष्यं नैव चिन्तयेत् ।
वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति विचक्षणाः॥

One should not mourn over the past and should not remain worried about the future. The wise operate in present.

बीते हुए समय का शोक नहीं करना चाहिए और भविष्य के लिए परेशान नहीं होना चाहिए, बुद्धिमान तो वर्तमान में ही कार्य करते हैं |

76: चन्दनं शीतलं लोके चंदनादपि चंद्रमा: |
चन्द्रचन्दनयोर्मध्ये शीतला साधुसंगत: ||

sandalwood is pleasant (cool), moon (or moon light) is more pleasant than sandal. (but) company of a good person (sAdhu) is pleasant then both moon and sandal.

संसार में चन्दन को शीतल माना जाता है लेकिन चन्द्रमा चन्दन से भी शीतल होता है | अच्छे मित्रों का साथ चन्द्र और चन्दन दोनों की तुलना में अधिक शीतलता देने वाला होता है |

77

: आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति॥

Just as all the water falling from the sky goes into sea, similarly salutations offered to all Gods go to Sri Hari (Sri Krishna).

आकाश से गिरा हुआ पानी जैसे समुद्र में जाता है, उसी प्रकार किसी भी देवता को किया गया नमस्कार श्रीहरि (श्रीकृष्ण) को जाता है।

78: क्रोधो मूलमनर्थानां क्रोधः संसारबन्धनम्।
धर्मक्षयकरः क्रोधः तस्मात् क्रोधं विवर्जयेत्॥

Anger is the root cause of all misfortunes. Anger is the reason for bondage with this world. Anger reduces righteousness, hence give up anger.

क्रोध समस्त विपत्तियों का मूल कारण है, क्रोध संसार बंधन का कारण है, क्रोध धर्म का नाश करने वाला है, इसलिए क्रोध को त्याग दें।
79: परोक्षे कार्यहंतारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनं ।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुंभं पयोमुखम् ॥

A friend whose talk is sweet in person but who spoils the job when out of sight should be abandoned like a pot of poison topped with milk.

सीधे शब्दों में इसका अर्थ है कि जो मित्र सम्मुख मधुरभाषण करते हैं किंतु पीठ-पीछे आपका कार्य बिगाड़ते हैं, उनसे नाता नहीं रखना चाहिए क्योंकि वह ऐसे घड़े के समान हैं जिसमें विष भरा है लेकिन ऊपरी सतह दूध की है।
80: विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम्।
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनाद्धर्मं ततः सुखम्॥

Knowledge gives humility, humility leads to capability, from capability one acquires wealth, wealth leads to righteousness and then happiness follows.

विद्या विनय देती है, विनय से पात्रता आती है, पात्रता से धन की प्राप्ति होती है, धन से धर्म और धर्म से सुख की प्राप्ति होती है।

81: विद्वत्वं च नृपत्वं च न एव तुल्ये कदाचन्।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

Intelligence and kingdom can never be compared. A king is respected in his own land whereas a wise man is respected everywhere.

विद्वान और राज्य अतुलनीय हैं, राजा को तो अपने राज्य में ही सम्मान मिलता है पर विद्वान का सर्वत्र सम्मान होता है ॥

82: अत्यन्तकोपः कटुका च वाणी दरिद्रता च स्वजनेषु वैरं ।
नीचप्रसङ्गः कुलहीनसेवा चिह्नानि देहे नरकस्थितानाम् ॥

Extreme of anger, harsh speech, poverty, enmity with relatives, association with evil men, service of people from not so good a family – these are the marks of people living in Hell

अत्यंत क्रोध करना अति कटु कठोर तथा कर्कश वाणीक होना, निर्धनता, अपने ही बंधु बांधवों से बैर करना, नीचों की संगति तथा कुलहीन की सेवा करना यह सभी स्थितियां प्रथ्वी पर ही नरक भोगने का प्रमाण है।''

83: किमत्र बहुनोक्तेन शास्त्रकोटि शतेन च ।
दुर्लभा चित्त विश्रान्तिः विना गुरुकृपां परम् ॥

What else can be said, one who recite the stotram, looks like Lord Narshimha and whatever he wishes in his mind is accomplished, there is no doubt about this truth.

बहुत कहने से क्या ? करोडों शास्त्रों से भी क्या ? चित्त की परम् शांति, गुरु के बिना मिलना दुर्लभ है ।

84: चिता चिंता समाप्रोक्ता बिंदुमात्रं विशेषता।
सजीवं दहते चिंता निर्जीवं दहते चिता ॥

"Chita" and "Chinta" are said to be same still there is a difference of a dot.
Pyre(chita) burns the dead while Worry(chinta) burns the alive.

चिता और चिंता समान कही गयी हैं पर उसमें भी चिंता में एक बिंदु की विशेषता है; चिता तो मरे हुए को ही जलाती है पर चिंता जीवित व्यक्ति को मार देती है।

85: अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

Salute to the guru, who opens eyes of a person blind due to darkness of ignorance, by knowledge (GYAna). Guru is one of the most honorable personalities in Indian (Hindu) tradition.

जिसने ज्ञानांजनरुप शलाका से, अज्ञानरुप अंधकार से अंधे हुए लोगों की आँखें खोली, उन गुरु को नमस्कार ।

86: दानेन तुल्यो विधिरास्ति नान्यो लोभोच नान्योस्ति रिपु: पृथिव्या |
विभूषणं शीलसमं च नान्यत् सन्तोषतुल्यं धनमस्ति नान्यत् ||

No ritual as sacred as charity. No enemy like greed. No ornament like chastity. No wealth like contentment.

दान के समान कोई यज्ञ नहीं, लालच के समान कोई शत्रु नहीं , शील (चरित्र) के समान कोई आभूषण नहीं, और संतोष के समान कोई धन नहीं।

86: क्षमा बलमशक्तानाम् शक्तानाम् भूषणम् क्षमा।
क्षमा वशीकृते लोके क्षमयाः किम् न सिद्ध्यति॥

Forgiveness is the power of powerless. Forgiveness adorns the powerful. Forgiveness has controlled this entire world. What cannot be achieved by forgiveness!

क्षमा निर्बलों का बल है, क्षमा बलवानों का आभूषण है, क्षमा ने इस विश्व को वश में किया हुआ है, क्षमा से कौन सा कार्य सिद्ध नहीं हो सकता है।
87:
आयुषः क्षण एकोऽपि सर्वरत्नैर्न न लभ्यते।
नीयते स वृथा येन प्रमादः सुमहानहो ॥

Even a single second in life cannot be obtained back by all precious jewels. Hence spending it wastefully is a great mistake.

आयु का एक क्षण भी सारे रत्नों को देने से प्राप्त नहीं किया जा सकता है, अतः इसको व्यर्थ में नष्ट कर देना महान भूल है ॥